संगीत में अनुसंधानः समस्यायें और समाधन

डा० किरन शर्मा
असि०प्रो० (संगीत)
आर० जी० पी० जी० कॉलिज मेरठ

भारतीय संगीत की भक्ति परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। प्रारम्भ से ही भारतीय संगीत की अपनी एक आध्यात्मिक पृष्ठाभूमि रही है। यहॉ मानव की संगीत साधना का लक्ष्य केवल मनोरंजन मात्र वरन् मोक्ष प्राप्ति को साधन माना जाता था। अर्थात भक्ति को ही मुक्ति का साधन माना जाता था। याज्ञवाल्क्य– स्मृति में कहा गया है –

वीणा वादन तत्वज्ञ श्रुति जाति विशारदः।
तालज्ञश्चा प्रयासेन मोक्ष मार्ग निगच्छति।।

(यति धर्म–प्रकरण–श्लोक 115)

अर्थात वीणा वादन के तत्व का ज्ञाता, श्रुतियों तथा जातियों का मर्मज्ञ और ताल के स्वरूप का ज्ञान, स्वरों से अनुबिद्ध ब्रहमा की उपासना के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। भक्ति एवं संगीत का अटूट संबंध है। नाद ही आकाश का गुण है। जिस प्रकार आकाश अजन्त हैं एवं सर्वत्र व्याप्त है, उसी प्रकार संगीत भी सर्वत्र व्याप्त है। इस आधार पर स्वर को भी सम्पूर्ण ब्रहमाण्ड में व्याप्त होने के कारण ईश्वर के समकक्ष माना गया है। यह कहा सकता है कि स्वर एवं ईश्वर दो समान शक्तियॉ है। जहां इन दो शक्तियों का मेल हो जाता है वहां आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति होती है। यही आनन्द की प्राप्ति मानव का परम लक्ष्य है और यही भक्ति का वास्तविक स्वरूप है।

नाहि वसामि वैकुंठे योगिना हृदय न च।
मदभक्ता यत्र गायन्ति तत्र ष्ठिामि नारद।।

भावार्थ– भगवान विष्णु नारद जी से

कहते हैं कि 'हे नारद, न तो मैं बैकुंठ में रहता हूं और न योगियों के हृदय में, अपितु मेरे भग्त जहां गान करते है मैं वहीं निवास करता हूं।

उपर्युक्त श्लोक से यह सिद्ध होता है कि भक्तिमय संगीत स्वयं ईश्वर को प्रिय है। भक्ति भारतीय संस्कृति का मूल है। भारत में भक्ति संगीत की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है।

भक्ति क्या है?ईश्वर के प्रति अनन्य प्रेम एवं समपर्ण की भावना ही भक्ति है। शांडिल्य भक्ति सूत्र में कहा गया है –

''अथातो भक्ति जिज्ञासा।।1।।
सा परानुरक्तिरीश्वरे ।।2।।

अर्थात ईश्वर में अनुरक्ति ही भक्ति है।

वैदिक काल में संगीत का प्रतिनिधि ग्रन्थ सामवेद है। वैदिककाल में यज्ञादि धार्मिक अनुष्ठानों के समय विभिन्न देवी देवताओं के लिए जो सस्वर मंत्र गाये जाते थे, वे भक्ति संगीत का सबसे प्राचीन रूप है। ऋग्वेद, कालीन मन्त्रों का गेय रूप ही सामवेद है। 'सामवेद' संगीतमय एवं भक्तिमय है।

सामवेद तो ऋग्वेद का ही रूपान्तर है। यह कहा जा सकता है कि सामवेद का संगीत भारत के इतिहास में प्रथम भक्ति संगीत होने का अधिकारी है। यह वह संगीत है जिसमें भक्त द्वारा अपनी आराध्य विषयक भावनाओं को स्वरों के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इन गीतों की सरसता का मूल आत्मीयता तथा आत्म निवेदन में है। शब्द जब स्वर लय एवं ताल से सुसज्जित कर गाये जाते हैं तो उनका प्रभाव अलौकिक होता है। संगीत के अन्तर्गत स्वर, लय तथा पद तीनों के सम्यक निर्वाह पर ध्यान देना संगीत शास्त्र में 'अवधान' कहलाता है, तथा इन तीनों का समुचित संगम ही उत्कृष्ट भक्ति संगीत को जन्म देता है। शास्त्रों में कहा गया है कि पूजा की अपेक्षा करोड़ गुना प्रभावशाली स्त्रोत है, स्त्रोत–पाठ से करोड़ गुना श्रेष्ठ जप है तथा जप से करोड़ गुना श्रेष्ठ गान है अर्थात भक्ति संगीत सर्वश्रेष्ठ है। भक्ति और संगीत का यह संयोग लौकिक एवं पारलौकिक का भेद समाप्त कर अनिर्वचनीय आनन्द की अनुभूति कराता है।

पुराणों में भक्ति संगीत के अनेक स्त्रोतों का वर्णन है। स्त्रोतों को सस्वर गाने की परम्परा रही है। शंकराचार्य द्वारा रचे हुए अनेक स्त्रोतों में संगीत के पर्याप्त तत्व प्राप्त होते हैं जिनके सस्वर गान से मानसिक शान्ति प्राप्त होती है।

पौराणिक ग्रन्थों में रामायण एवं महाभारत भी भक्तिमय संगीत से परिपूर्ण थे। रावण द्वारा रचित 'शिव तांडव स्त्रोत' पूर्णतयः संगीतात्मक है।

भक्ति एवं संगीत का अटूट सम्बन्ध है। भारतीय परम्परा में संगीत का पर्याय ही भक्ति समझा जाता रहा है। संगीत एवं भक्ति के मूल में भावनाओं का एक सुन्दर मन्दिर है इस मन्दिर में अपने आराध्य की प्रतिमा को स्थापित कर कलाकार यह साधक उस परम ईश्वर का सुगमता से दर्शन कर सकता है। शास्त्रों में भक्ति के 'वैधी' एवं 'रागानुगा' दो भेद बताये गये हैं। 'वैधी' भक्ति वह है जो शास्त्रानुमोदित रीति से की जाती है तथा 'रागानुगा' भक्ति राग प्रधान होती है ईश्वर के प्रति आसक्ति रागानुगा भक्ति के अन्तर्गत आती है।

प्रायः रांग, आसक्ति एवं मोह की भावना प्राणियों में स्वाभाविक रूप से होती है। यह भावना मानव का सहज स्वभाव है। अन्तर मात्र इतना है कि यह राग अथवा मोह सांसरिक वस्तुओं के लिए न होकर भगवान के लिए हो, यही भक्ति है, जो सहज एवं स्वाभाविक है। भक्ति की यही स्वाभाविकता और सरलता सम्पूर्ण प्राणियों को सहज ही आकर्षित करती है। भक्ति भगवान के प्रति अर्पित की हुई एक भावना है। इस भावना के वशीभूत होकर मनुष्य सब कुछ उस विराट स्वरूप के चरणों में अर्पित कर देता है। इस दृष्टि से भक्ति के नौ प्रकार बताये गये हैं– श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद–सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य , सख्य और आत्मनिवेदन। भक्ति के विविध भावों की अभिव्यक्ति इन्हीं प्रकारों के माध्यम से होती है। इन सभी प्रकारों में सर्वाधिक सुगम एवं सहज मार्ग 'कीर्तन' कहा गया है। भक्ति संगीत में कीर्तन का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान हैं। ईश्वर के नाम गुण आदि का स्वर तथा लय के साथ एकल अथवा सामूहिक रूप से उच्च स्वर में गान करना कीर्तन के अन्तर्गत आता है। कीर्तन के आदि प्रवर्तक महर्षि नारद है जो सदैव आपनी वीणा के सहारे प्रभु का गुणगान करते रहते थे। कीर्तन में भक्ति साधन न होकर साध्य है। और इस भक्ति रस से प्राप्त आनन्द मोक्ष से भी बढ़कर है। भक्तों का विविध वाद्यों के साथ सम्मिलत रूप से गायन व नर्तन एक अलौकिक रस की सृष्टि करता है, जो नवरसों में श्रेष्ठ है। भक्ति और संगीत का यह समन्वय परमानन्द की उत्कृष्ट अवस्था है।

भक्ति रस का काव्य अधिकाशतः राधा कृष्ण की लीलाओं का संगीतमय चित्रण प्रस्तुत करता है। वल्लभाचार्य और उनका अष्टछाप सम्प्रदाय अपने भक्तिमय पदों के लिए प्रसिद्ध है। सूरदास, परमानन्द दास, कुम्भनदास, कृष्णदास, नन्ददास, चतुर्भुजदास, गोविन्दस्वामी तथा छीतस्वामी ये सभी आठ कवि इसी अष्टछाप के अन्तर्गत आते हैं। इन अष्टछाप के कवियों ने नवीन पदों की रचना कर उन्हें विभिन्न राग–रागिनियों में निबद्ध किया है। भक्ति रस से परिपूर्ण ये पद शताब्दियों से जनमानस को आनन्दित करते रहे है। अष्टछाप के साहित्यिक पदों में भारतीय संगीत की अनेकों राग–रागिनियों का अमूल्य कोष है। भारतीय संगीत की राग परम्परा में भक्तिकाल के इन संगीतमय पदों का अमूल्य योगदान है।

भक्ति संगीत के अन्तर्गत कीर्तन, संकीर्तन भजन, हरिकथा, इत्यादि गायी जाने वाली विधाओं का गायन भारत के विभिनन प्रदेशों में उनकी प्रादेशिक भाषाओं के माध्यम से होता रहा है। विभिन्न प्रदेशों की भाषा भले ही अलग हो, किन्तु भक्ति रस से परिपूर्ण इन संगीतमयी पदों का मूल उद्देश्य प्रभु का गुणगान कर अलौकिक आनन्दमयी रसपूर्ण वातावरण का सृजन करना है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश में सूर, तुलसी, राजस्थान में मीराबाई, बंगाल में चैतन्य महाप्रभु, बिहार में जयदेव, महाराष्ट्र में समर्थ रामदास, गुजरात में नरसी, कनार्टक में त्यागराज इसी परम्परा के प्रवर्तक रहे है।

संगीत की उपासना को ईश्वर की उपासना कहा गया है जब इसमें भक्ति भी समाहित हो जाती है तो संगीत एवं भक्ति का यह समन्वय अन्तःकरण को शुद्ध करता है। अन्तःकरण की पवित्रता से ही मनुष्य में नैतिकता एवं सदाचार की भावना व्याप्त होती है। भक्ति गीत पवित्र, वंदनीय तथा अलौकिक शक्ति सम्पन्न होते है जो मानव जीवन को राग–द्वेष, हर्ष–शोक से विमुक्ति प्रदान करते है।

<u>सन्दर्भ ग्रन्थ–</u>

1. हिन्दी के कृष्ण भक्ति कालीन साहित्य में संगीत
2. संगीत फरवरी 1970
3. संगीत निबन्ध संग्रह
4. संगीत रत्नावली
5. संगीत भक्ति संगीत अंक
6. संगीत अप्रैल 1980